

योग वर्णावली

अभ्यास से ज्ञान तक की यात्रा

BEkushal
Get smarter. Get wiser.



ॐ

अभ्यास

तत्र स्थितौ यत्नोऽभ्यासः

पातञ्जल योगसूत्र 1.13

उच्च स्थिति में बने रहने के निरंतर प्रयास को अभ्यास कहते हैं।



आत्मा

सत्त्वशुद्धिसौमनस्यैकाग्र्येन्द्रियजयात्मदर्शनयोग्यत्वानि च

पातञ्जल योगसूत्र 2.41

मन की शुद्धि के द्वारा मनुष्य को आनंद, एकाग्रता, इन्द्रिय नियंत्रण
एवं आत्मा की अनुभूति करने की योग्यता प्राप्त होती है।

इन्द्रिय



कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षयातपसः

पातञ्जल योगसूत्र 2.43

घोर तपस्या के द्वारा मनुष्य को शरीर और इन्द्रियों
की सिद्धि प्राप्त होती है एवं अशुद्धियों की क्षति होती है।

स्टेंस

ईकर

समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात्

पातञ्जल योगसूत्र 2.45

ईश्वर प्रणिधान भी समाधि की सिद्धि प्राप्त करने का एक मार्ग है।



3

उदार

उदारः सर्व एवैते ज्ञानी त्यात्मैव मे मतम् ।
आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम् ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 7.18

(पहले कहे हुए) सब के सब ही भक्त बड़े उदार हैं।
परन्तु ज्ञानी व्यक्ति तो मेरा स्वरूप ही है।



ॐ

ॐ

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः ।

जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 14.18

सत्त्वगुण में स्थित लोग ऊर्ध्वलोक में जाते हैं,
रजो गुण में स्थित मनुष्य मृत्यु लोक में जन्म लेते हैं
और तमोगुण में स्थित तामस मनुष्य अधोगति को प्राप्त होते हैं।

ए

कायता



सर्वार्थतैकाग्रतयोः क्षयोदयौ चित्तस्य समाधिपरिणामः

पातञ्जल योगसूत्र 3.11

मन में एकाग्रता विकसित होने से
चित्त समाधि की ओर अग्रसर होता है।

એરવાર્ય



भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम् ।

व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 2.44

उस पुष्टि वाणी से जिसका अंतःकरण हर लिया गया है
और जो भोग तथा ऐश्वर्य में अत्यंत आसक्त है,
उन मनुष्यों की परमात्मा में एक निश्चय वाली बुद्धि नहीं होती।

ॐ

ओंकार



ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 8.13

जो मनुष्य ओंकार का मानसिक उच्चारण और
मेरा स्मरण करता हुआ शरीर छोड़ता है,
वह परम गति को प्राप्त होता है।

ॐ

औषधि



जन्मौषधिमन्त्रतपः समाधिजाः सिद्धियः

पातञ्जल योगसूत्र 4.1

मनुष्य को सिद्धियां उसके जन्म, औषधि, मंत्र, तप
या समाधि के द्वारा प्राप्त हो सकती है।

ऋषि



न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः ।
अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 10.2

मेरे अवतरित होने के रहस्य को न देवता जानते हैं न महर्षि
क्योंकि मैं सब प्रकार से इनका आदि हूँ।



कर्म

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय ।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 2.48

हे धनंजय! तू आसक्ति का त्याग करके सिद्धि असिद्धि में सम होकर योग में स्थित हुआ कर्मों को कर; क्योंकि समत्व ही योग कहा जाता है।



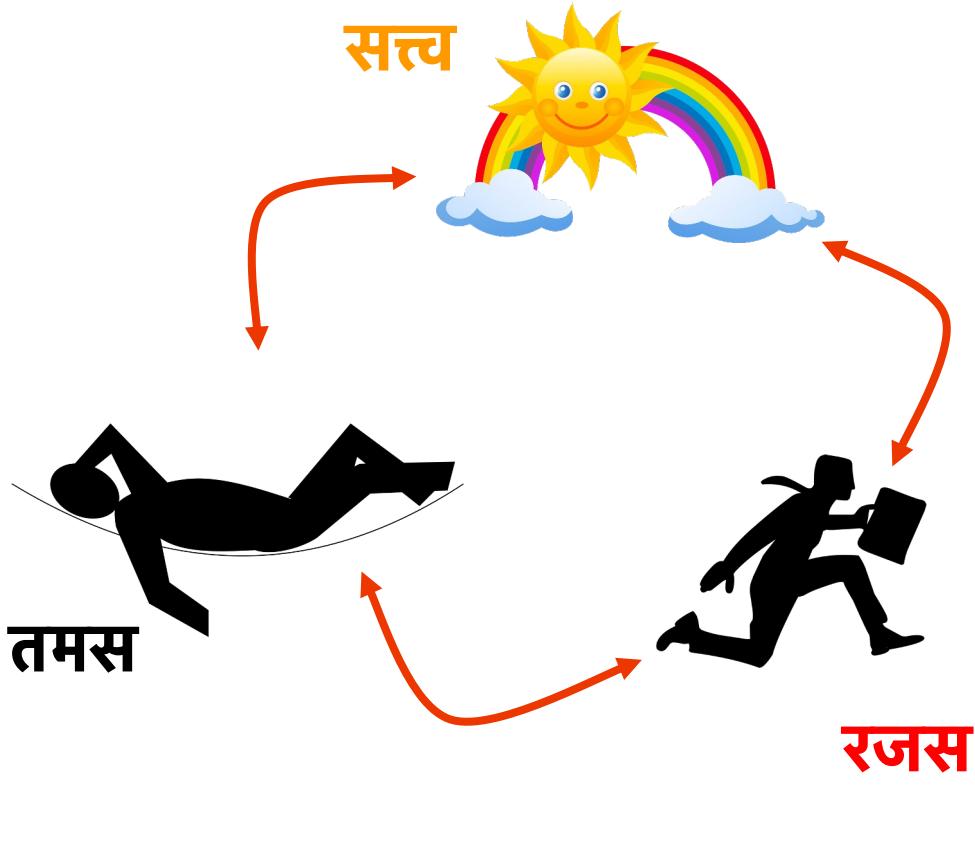
रुप

ख्याति

विवेकख्यातिरविप्लवा हानोपायः

पातञ्जल योगसूत्र 2.26

विवेक ख्याति के निरंतर प्रयास से मुक्ति प्राप्त होती है।



गुण

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः ।

अहङ्कारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 3.27

सम्पूर्ण कर्म सब प्रकार से प्रकृति के गुणों द्वारा किये जाते हैं,
परन्तु अहंकार से मोहित अंतःकरण वाला अज्ञानी मनुष्य
स्वयं को कर्ता मान लेता है।

ଧ

ଘୋର



अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः ।

दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 17.5

जो मनुष्य शास्त्रविधि से रहित घोर तप करते हैं,
जो दम्भ, अहंकार, भोगपदार्थ, आसक्ति और हठ से युक्त हैं,
(उन अज्ञानियों को तू आसुरी निष्ठावाले समझ) ।

ॐ

ॐकार



इङ्कार कई मंत्रों में पाया जाता है

ओइङ्कार, एइङ्कार, हीइङ्कार, ...

त

चित्

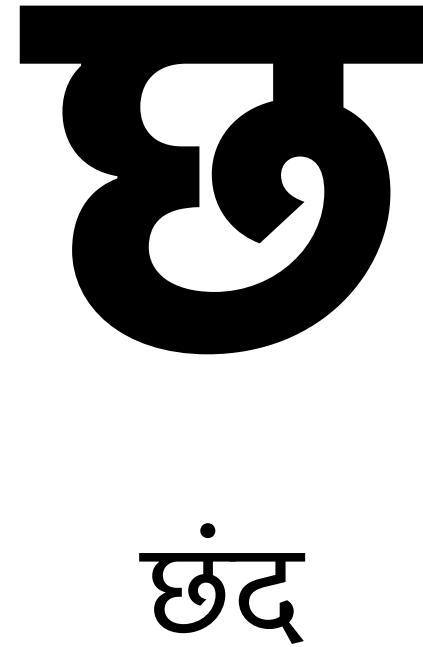


यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता । योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 6.19

जैसे स्पंदनरहित वायु के स्थान में स्थित दीपक की लौ चेष्टारहित हो जाती है,
योग का अभ्यास करते हुए वश में किये हुए चित्त वाले
योगी के चित्त की वैसी ही उपमा कही गई है।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव



छंद को पद्य रचना का मापदंड कहा जा सकता है।

श्रीमद्भगवद् गीता के 700 श्लोकों में से
645 श्लोक अनुष्टुप छंद में लिखे गए हैं,
और बाकी 55 श्लोक त्रिष्टुप छंद में लिखे गए हैं।

ॐ

जप



तज्जपस्तदर्थभावनम्

पातञ्जल योगसूत्र 1.28

ईश्वर के नाम का जप उसके अर्थ को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए।



श
झंकार

रुद्रग्रन्थि यदा भित्त्वा शर्वपीठगतोऽनिलः ।
निष्पत्तौ वैनवः शब्दः क्यणद्वीणाक्यणो भवेत् ॥

हठ योग प्रदीपिका 4.76

निष्पत्ति अवस्था में साधक का प्राण रुद्रग्रन्थि का भेदन करके
आज्ञा चक्र में स्थित हो जाता है, जिसके परिणाम स्वरूप साधक को
वीणा नामक अत्यन्त मनमोहक वाय्यन्त्र की धनि (झंकार) सुनाई देती है।



ତ

ବ

शैव परम्परा में नन्दि को नन्दिनाथ सम्प्रदाय का मुख्य गुरु माना जाता है।

पुराणों के अनुसार नन्दि शिव के वाहन तथा अवतार भी हैं
जिन्हे बैल (ज) के रूप में शिव के मन्दिरों में प्रतिष्ठित किया जाता है।

संस्कृत में 'नन्दि' का अर्थ आनन्द है।
नन्दि को शक्ति, संपन्नता और कर्मठता का प्रतीक माना जाता है।

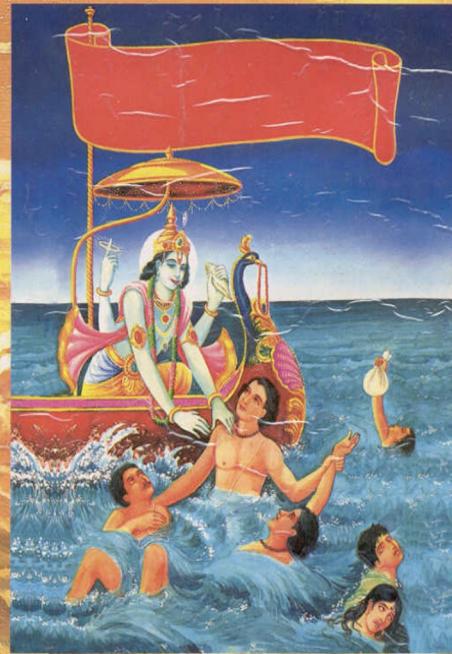


॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

6

श्रीमद्भगवद्गीता

साधक-संजीवनी (परिशिष्टसहित)
हिन्दी-टीका



स्वामी रामसुखदास

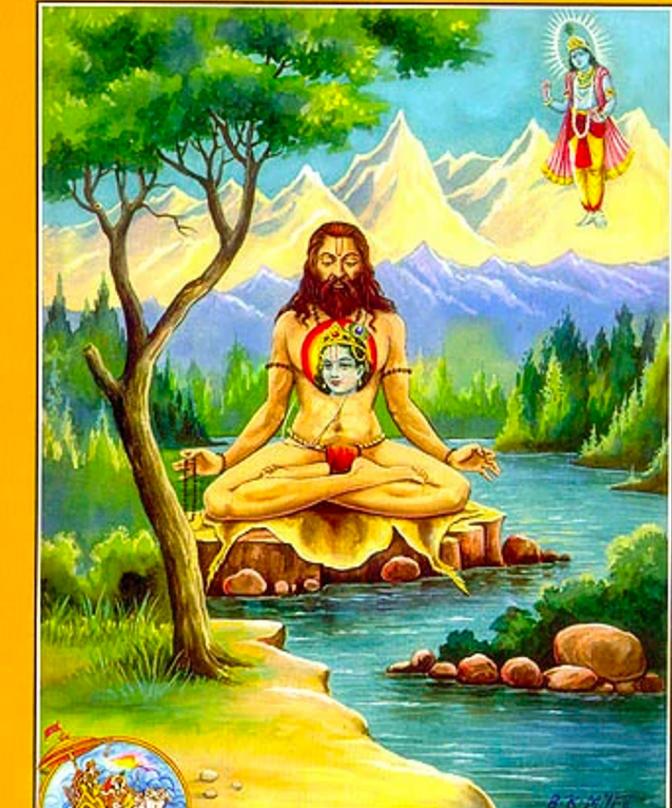
ट

टीका

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

47

पातञ्जलयोगप्रदीप

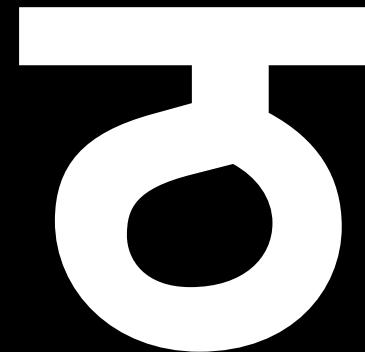


गीताप्रेस, गोरखपुर
GITA PRESS, GORAKHPUR

गीताप्रेस, गोरखपुर

संस्कृत साहित्य की परम्परा में उन ग्रन्थों को भाष्य अथवा टीका कहते हैं,
जो दूसरे ग्रन्थों के अर्थ की वृहद् व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

गीता पर अनेक आचार्यों एवं विद्वानों ने टीकाएँ की हैं जैसे की
शांकराभाष्य (अद्वैत), रामानुजाचार्यकृत गीताभाष्य (विशिष्टाद्वैत),
और मध्वाचार्य कृत गीताभाष्य (द्वैत) प्रसिद्ध हैं।



ठाकुर

श्री रामकृष्ण एवं श्री कृष्ण को उनके भक्त प्यार से ठाकुर कहते हैं।

CS

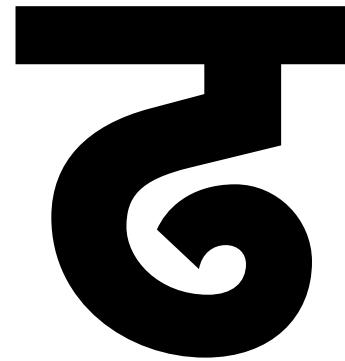
डमरू



डमरु के चौदह बार बजाने से चौदह सूत्रों के रूप में ध्वनियाँ निकली
और इन्हीं ध्वनियों से व्याकरण का प्रकार्थ हुआ।

इसलिये व्याकरण सूत्रों के आदि-प्रवर्तक भगवान नटराज को माना जाता है।

प्रसिद्धि है कि महर्षि पाणिनि ने इन सूत्रों को देवादिदेव शिव के आशीर्वाद
से प्राप्त किया जो कि संस्कृत व्याकरण का आधार बना।



ढोल

तृतीयायां तु विज्ञेयो विहायोमर्दलध्वनिः ।

महशून्यं तदा याति सर्वसिद्धिसमाश्रयम् ॥

हठ योग प्रदीपिका 4.74

नादयोग की इस तीसरी अवस्था में साधक को हृदय आकाश
में मर्दल (ठोल) नामक वाययंत्र की ध्वनि सुनाई देती है।
सभी सिद्धियों को प्रदान करवाने वाले उस आकाश तत्त्व में पहुँच कर,
प्राण विशुद्धि चक्र का भेदन करता है।

UT

UT:



ण से कोई शब्द नहीं होता,
पर वस्तुतः णः से ज्ञान या शिव
इत्यादि को इंगित किया जा सकता है।



त

तपस्या

तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः

पातञ्जल योगसूत्र 2.1

तपस्या, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान
क्रिया योग पथ के अंग हैं।



ବ୍ୟା

ଥଳ

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।

अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 7.4

भूमि (पृथ्वी, थल), जल, तेज, वायु, आकाश, मन, बुद्धि तथा अहंकार

- यह आठ प्रकार के भेदों वाली मेरी (अपरा) प्रकृति है।

Q

दान



दातव्यमिति यद्वानं दीयतेऽनुपकारिणे ।

देशे काले च पात्रे च तद्वानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 17.20

दान देना कर्तव्य है - ऐसे भाव से
जो देश, काल तथा पात्र के प्राप्त होने पर
निष्काम भाव से दिया जाता है, वह दान सात्त्विक कहा जाता है।



ध्या

ध्यान

ध्यानहेयास्तद्वृत्तयः

पातञ्जल योगसूत्र 2.11

ध्यान के माध्यम से चित्त की वृत्तियों को शांत किया जा सकता है।

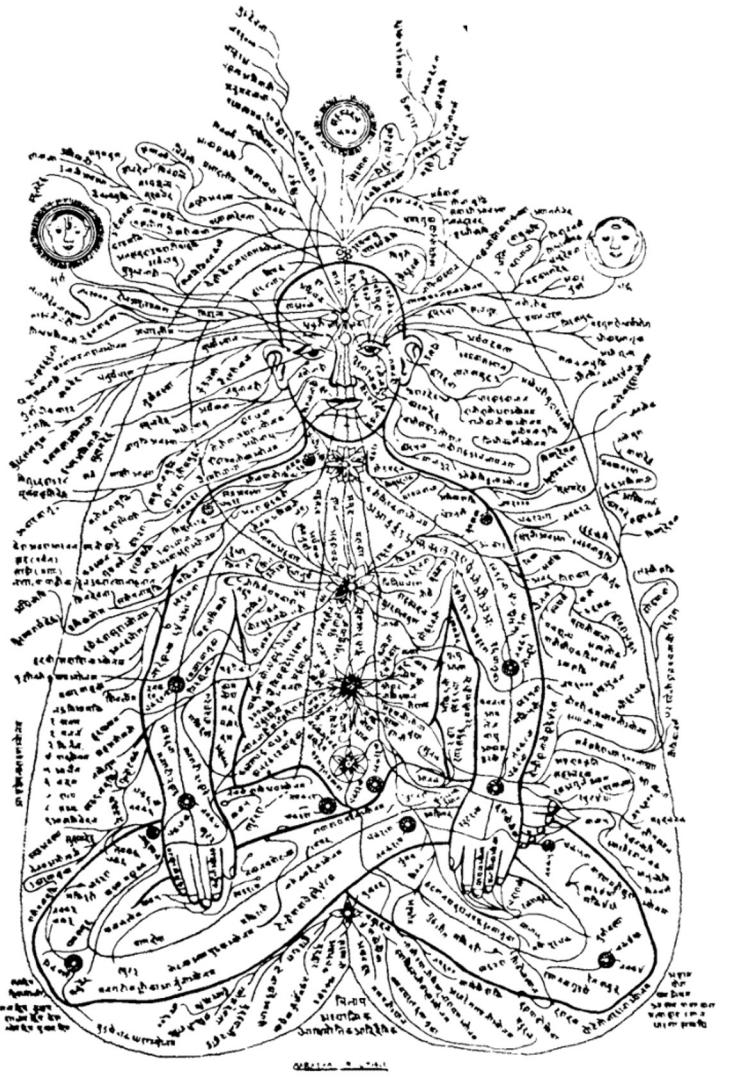


नि
यम

शौचसंतोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः

पातञ्जल योगसूत्र 2.32

स्वच्छता, संतोष, तप, स्वाध्याय एवं ईश्वर प्रणिधान
योग के नियम कहलाते हैं।



प्राण

प्राण

प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य

पातञ्जल योगसूत्र 1.34

(अथवा) प्राण वायु को बारम्बार बाहर निकलने
और रोकने के अभ्यास से भी (चित्त निर्मल होता है)।



ਪਲ

ਪਲ

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुभूर्भुते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 2.47

कर्तव्य कर्म करने में ही मनुष्य का अधिकार है, फलों में कभी नहीं।
अतः तू कर्मफल का हेतु मत बन और कर्म न करने में भी तेरी आसक्ति न हो।

ए

बुद्धि



बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते ।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 2.50

बुद्धि (समता) से युक्त मनुष्य यहाँ जीवित अवस्था में ही

पुण्य और पाप का त्याग कर देता है।

अतः तू योग (समता) में लग जा, क्योंकि कर्मों में योग ही कुशलता है।



मवित

२

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया ।
यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम् ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 8.22

हे पार्थ! सम्पूर्ण प्राणी जिसके अंतर्गत हैं और ये सम्पूर्ण संसार जिससे व्याप्त है,
वह परम पुरुष परमात्मा तो अनन्यभक्ति से प्राप्त होने योग्य है।



ॐ

मंत्र

विधिहीनमसृष्टानं मन्त्रहीनमदक्षिणम् ।

श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 17.13

शास्त्रविधि से हीन, अन्न दान से रहित, बिना मंत्रों के,
बिना दक्षिणा के, और बिना श्रद्धा के किये जाने वाले यज्ञ को तामस कहते हैं।

य

योग



योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः

पातञ्जल योगसूत्र 1.2

चित की वृत्तियों के निरोध को योग कहते हैं।

R

रजस



लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा ।

रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 14.12

हे भरतवंश में श्रेष्ठ अर्जुन! रजस के बढ़ने पर लोभ, प्रवृत्ति, कर्मों का आरम्भ, अशांति और स्पृहा - ये वृत्तियाँ पैदा होती हैं।

ग

लीला



स एष प्रकृतिं सूक्ष्मां दैवीं गुणमयीं विभुः ।

यदृच्छयैवोपगतामभ्यपद्यत लीलया ॥

श्रीमद्भागवतम् 3.26.4

अपनी लीला के रूप में, महानतम भगवान,
उस परम व्यक्तित्व ने सूक्ष्म भौतिक ऊर्जा (देवी) को स्वीकार किया,
जो प्रकृति के तीन भौतिक गुणों से युक्त है और जो विष्णु से संबंधित है।

ਤ

ਵੁਤਿ



वृत्तयः पञ्चतयः क्लिष्टाक्लिष्टाः

पातञ्जल योगसूत्र 1.5

वृत्तियाँ पांच तरह की होती हैं,

जो की (योग के अभ्यास के लिए) हानिकारक या निर्दोष हो सकती हैं।



రి

రావిత్

कुण्डली कुटिलाकारा सर्पवत्परिकीर्तिता ।

सा शक्तिश्छालिता येन स मुक्तो नात्र संशयः ॥

हठ योग प्रदीपिका 3.108

यह कुण्डलिनी (शक्ति) सर्प की भाँती टेढ़ी मेढ़ी आकृति वाली होती है।

जो योग साधक इस कुण्डलिनी शक्ति को क्रियाशील

कर लेता है निःसंदेह वह मुक्त हो जाता है।



અ

ષટ્કર્મ

धौतिर्बस्तिस्तथा नेति: त्राटकं नौलिकं तथा । कपालभातिश्चैतानि षट् कर्मणि प्रचक्षते ॥

हठ योग प्रदीपिका 2.22

धौति, बस्ति, नेति, त्राटक, नौलि एवं कपालभाति
- इन छः शुद्धि क्रियाओं को षट्कर्म कहा जाता हैं ।



त

सत्त्व

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः ।

रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 17.8

आयु, सत्त्व गुण, बल, आरोग्य, सुख और प्रसन्नता बढ़ानेवाले,
स्थिर रहनेवाले, हृदय को शक्ति देने वाले, रसयुक्त तथा चिकने
- ऐसे आहार सात्त्विक मनुष्य को प्रिय होते हैं।

ੴ

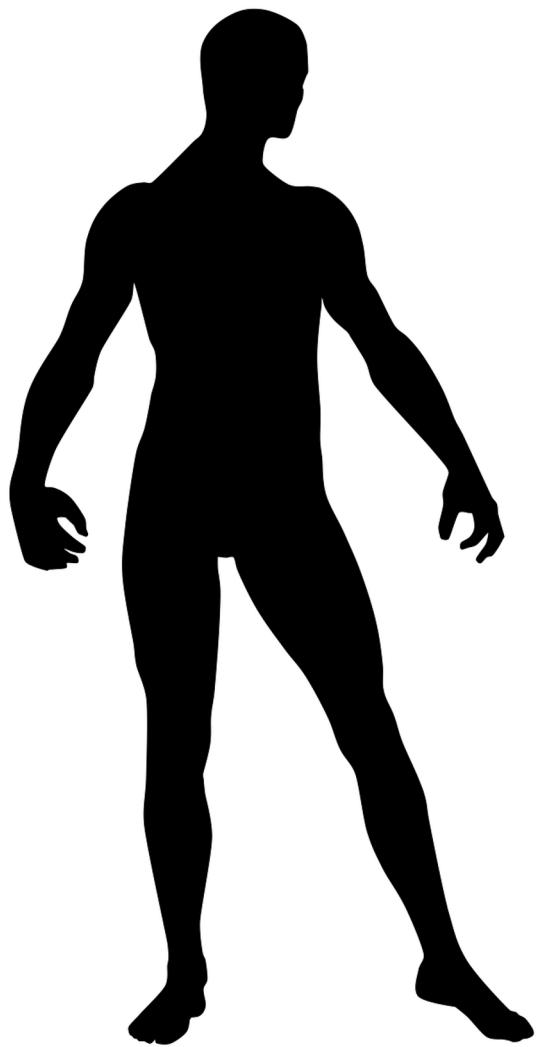
ਹਰਿ



एवमुक्त्या ततो राजन्महायोगेश्वरो हरिः ।
दर्शयामास पार्थ्य परमं रूपमैश्वरम् ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 11.9

हे राजन! ऐसा कहकर महायोगेश्वर हरि (भगवान् कृष्ण)
ने अर्जुन को परम ऐश्वर्य विराट् रूप दिखाया।



৪৮

ক্ষেত্র

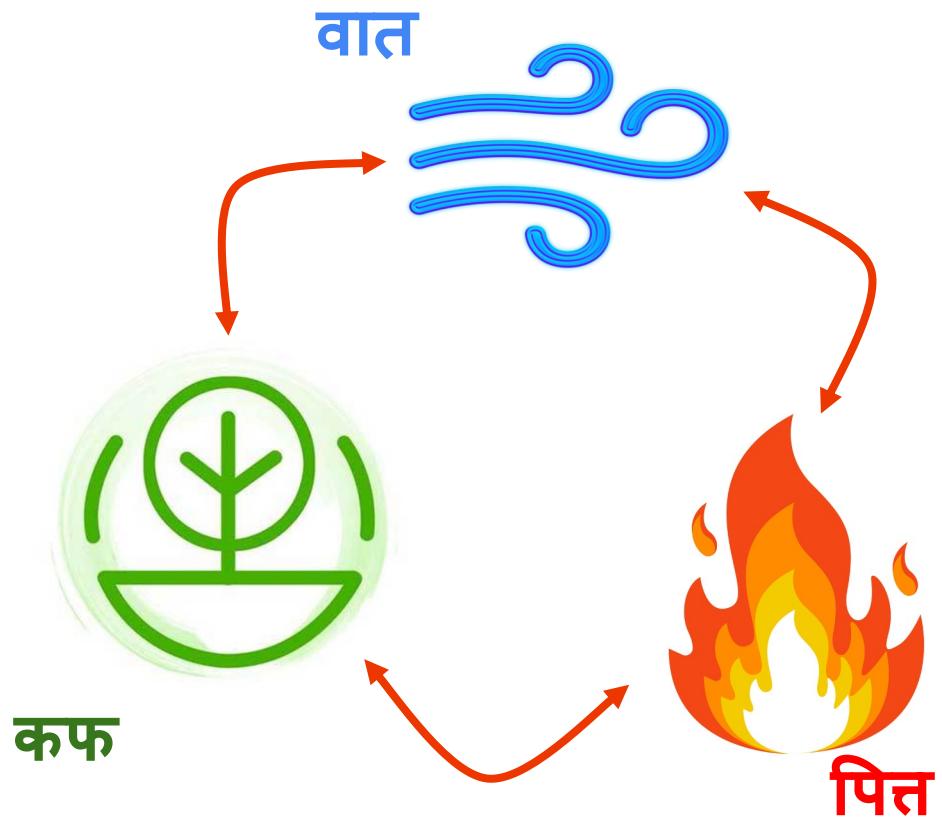
इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते ।
एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः ॥

श्रीमद्भगवद् गीता 13.1

हे कुन्तीपुत्र अर्जुन! इस शरीर को क्षेत्र कहते हैं
और इस क्षेत्र को जो जानता है उसे ज्ञानी लोग क्षेत्रज्ञ कहते हैं।

ऋ

त्रिदोष



वायु पितं कफशचेति त्रयो दोषाः समास्तः ।

विकृता विकृतादेहं घन्ति ते वर्तयन्ति च ॥

अष्टाङ्गहृदयम् 1.1

वात, पित एवं कफ शरीर के त्रिदोष हैं।

इन त्रिदोषों के पूर्ण संतुलन से स्वास्थ्य अच्छा रहता है,

और इनका संतुलन बिगड़ने से बीमारी होती है।

5

सान

योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिरा विवेकख्याते:

पातञ्जल योगसूत्र 2.28

योग के अंगों का अनुष्ठान करने से, अशुद्धि का नाश हो जाता है,
जिससे ज्ञान की रौशनी चमकती है और विवेक जागरुक होता है।

Edited by:

Dr. Kushal Shah & Mrs. Shweta Arya
Bhopal, Madhya Pradesh, India

Email : atmabodha@gmail.com
Mobile : +91-9891262133

Web : www.bekushal.com

